सम्पूर्ण चाणक्य नीति

आचार्य चाणक्य की सम्पूर्ण कहानी

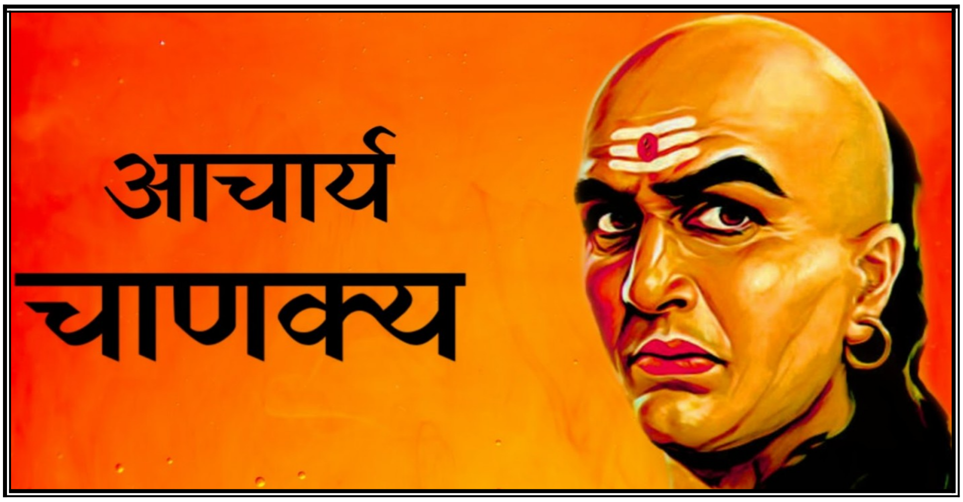

भारत के इतिहास में आचार्य चाणक्य का महत्वपूर्ण स्थान है। एक समय जब भारत छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित था और विदेशी शासक सिकंदर भारत पर आक्रमण करने के लिए भारतीय सीमा तक आ पहुंचा था, तब चाणक्य ने अपनी नीतियों से भारत की रक्षा की थी। चाणक्य ने अपने प्रयासों और अपनी नीतियों के बल पर एक सामान्य बालक चंद्रगुप्त को भारत का सम्राट बनाया जो आगे चलकर चंद्रगुप्त मौर्य के नाम से प्रसिद्ध हुए और अखंड भारत का निर्माण किया।

चाणक्य के काल में पाटलीपुत्र (वर्तमान में पटना) बहुत शक्तिशाली राज्य मगध की राजधानी था। उस समय नंदवंश का साम्राज्य था और राजा था धनानंद। कुछ लोग इस राजा का नाम महानंद भी बताते हैं। एक बार महानंद ने भरी सभा में चाणक्य का अपमान किया था और इसी अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए आचार्य ने चंद्रगुप्त को युद्धकला में पारंपत किया। चंद्रगुप्त की मदद से चाणक्य ने मगध पर आक्रमण किया और महानंद को पराजित किया।

आचार्य चाणक्य की नीतियां आज भी हमारे लिए बहुत उपयोगी हैं। जो भी व्यक्ति नीतियों का पालन करता है, उसे जीवन में सभी सुख-सुविधाएं और कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। हम अब तक अपने इस ब्लॉग पर सम्पूर्ण चाणक्य नीति और आचार्य चाणक्य के 600 महत्त्वपूर्ण कथन प्रकाशित कर चुके है। आज हम आप सभी के लिए आचार्य चाणक्य की सम्पूर्ण जीवन गाथा प्रकाशित कर रहे है।

चाणक्य- सम्पूर्ण कहानी

कुछ हज़ार वर्ष पूर्व का विशाल भारतवर्ष !

हिमालय से द्रविड़ तक तथा गांधार से ब्रहमदेश तक फैला हुआ, परन्तु छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित। इसी भारतवर्ष का एक वैभव-संपन्न व शक्तिशाली राज्य था मगध। मगध के सीमावर्ती नगर में ही थी वह झोपडी, जहां आचार्य चणक निवास करते थे।

आचार्य चणक बहुत विद्वान थे, परन्तु थे दरिद्र। उनके विशाल मस्तक पर तीन लम्बी व गहरी रेखाएं थी। नेत्र बहुत बड़े-बड़े और तीक्ष्ण थे। उनके शरीर पर सदा एक सफ़ेद धोती और जनेऊ रहता था। धोती का कुछ भाग वो अपने कन्धों पर डाले रहते थे। आचार्यजी की धर्मपत्नी भली स्त्री थी। वह अपने पति के सामान सुन्दर तथा संतोषी स्वभाव की थी। आचार्य उनसे बहुत प्रेम करते थे, परन्तु कभी-कभी निराश होकर कुछ उल्टा-सीधा भी कह बैठते थे।

निराश होने का कारण दरिद्रता नहीं थी, केवल निःसंतान होना था। विवाह हुए कई वर्ष हो गए थे, किन्तु अभी तक उन्हें पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। उन्हें अपना वंश समाप्त हो जाने की चिंता थी।

माँ बनने के लिए उनकी धर्मपत्नी ने भी कोई कम प्रयास नहीं किए थे। सभी देवताओं से प्रार्थना करने के साथ-साथ उन्होनें न जाने कितने ही संत-महात्माओं से आशीर्वाद लिए थे। कई घरेलु उपचार किए थे तथा टोने-टोटके तक किए थे, परन्तु किसी से भी कोई लाभ न हो रहा था। पति-पत्नी दोनों ही निराश हो चुके थे।

तीन साधु

एक दिन तीन साधु चणक की झोंपड़ी पर आए। उन्होंने भिक्षा की याचना की। चणक ने उन्हें हाथ जोड़ के प्रणाम किया और बोले-महाराज! भोजन का समय हो रहा है, कृपया भीतर पधारकर मेरी कुटिया को पवित्र करें और भोजन करके ही जाएं।

साधुओं ने चणक की प्रार्थना स्वीकार कर ली। जो रुखा-सुखा बना हुआ था उसे उन्होंने प्रेमपूर्वक खाया। जाते समय उन्होंने प्रसन्न होकर कहा -ईश्वर की कृपा से शीघ्र ही तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। तुम्हारे वंश का नाम युगों-युगों तक रोशन रहेगा।

पहले भी कई साधु इस प्रकार भोजन कर गए थे। वे भी इसी प्रकार आशीर्वाद दे गए थे तथा मन में एक उम्मीद जगा गए थे, परन्तु आशीर्वाद ने कोई फल न दिया, इसलिए उन तीन साधुओं द्वारा दिए गए आशीर्वाद से ब्राह्मण-दम्पति को कोई प्रसन्नता न हुई।

आशीर्वाद का प्रभाव

तीन साधुओं द्वारा दिया गया आशीर्वाद व्यर्थ न गया। एक दिन चणक की धर्मपत्नी गर्भवती हो गई। जब चणक को इसका पता चला तो वे प्रसन्नता से झूम उठे। उस समय उनके पास जितना भी धन था, वह सब उन्होंने दान कर दिया। जो भी साधु-संत मिला, उसे आग्रह कर-करके भोजन कराया। वर्षों बाद खुलकर हँसे तथा खुशियां मनाई।

यह सब उन तीन साधुओं के आशीर्वाद का फल है। वे अपनी पत्नी से बोले-वे साधारण साधू नहीं थे। लगता है, ब्रह्मा, विष्णु व शंकर जी साधु बनकर आए थे, हमारी मनोकामना पूरी करने के लिए। हमें आशीर्वाद देने के लिए।

आप बिलकुल ठीक कह रहे है। पत्नी ने कहा-उन्होंने बिना मांगे ही हमें आशीर्वाद दिया था। हमारे बिना बताए ही वे जान गए थे की हमारे कोई संतान नहीं है।

फिर तो अवश्य ही पुत्र होगा। चणक बोले -उन्होंने कहा था , हमारे वंश का नाम युगों-युगों तक रोशन रहेगा।

मुझे याद है। उन्होंने यही कहा था। पुत्र ही होगा। ऐसा पुत्र, जिसके प्रकाश से यह सुनी कुटिया भी जगमगा जाएगी। सारा सूनापन दूर जाएगा। दिन-रात उसकी किलकारियां गूंजा करेगी।

उस रात ब्राह्मण दंपति को नींद नहीं आई। वे अपने होने वाले पुत्र की कल्पनाओं में डूबे रहे। उसके बारे में तरह-तरह की बातें करते रहे तथा मधुर सपनों में खोए रहे।

एक विचित्र शिशु का जन्म

उचित अवसर आने पर चणक की पत्नी ने एक स्वस्थ, सुन्दर व विचित्र पुत्र को जन्म दिया। बालक का रंग माता-पिता जैसा न होकर सांवला था। उसका शरीर लगभग एक वर्ष के शिशु जैसा लगता था। विचित्र वह इसलिए था, क्योंकि जन्म के समय ही उसके मुंह में दो दांत निकले हुए थे।

उसका मस्तक चौड़ा, भृकुटियां बांकपन लिए हुए तथा नथुने यूँ फूले हुए थे जैसे बालक कुछ तनाव का अनुभव कर रहा हो। कभी-कभी वह अचानक यूँ मुस्कुरा पड़ता जैसे कोई रहस्य की बात समझ में आ गई हो।

हर माता-पिता के लिए पुत्र घर में प्रकाश करने वाला होता है। चाहे वह गोरा हो या काला। चणक व उसकी पत्नी पुत्र को पाकर फूले नहीं समा रहे थे। हाँ, उसके दांतों व क्रिया-कलापों को देखकर हैरान अवश्य थे।

चणक संतोष व धर्म-निष्ठां की साक्षात मूर्ति थे। उन्हें न धन की इच्छा थी, न सुख की लालसा। उनका सुख सीमित था। अपने कर्मकांड में, अपने घर में व अपने परिवार में उन्होंने कभी किसी का हृदय नहीं दुखाया था। जो कुछ मिला , उसे साधु-सन्यासियों पर खर्च कर दिया, परन्तु स्वयं के लिए कभी किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया। वे जीवन में केवल एक ही कमी का अनुभव करते थे। पुत्र-जन्म के साथ ही उनकी वह कमी दूर हो गई थी। वे स्वयं को संसार का सबसे सुखी व्यक्ति अनुभव कर रहे थे।

बालक का रंग कुछ सांवला नहीं है? अचानक पत्नी ने हिचकिचाते हुए उनसे पूंछा-मैंने तो यह सुन रखा है कि बच्चे का रंग या तो माँ जैसा होता है या फिर पिता जैसा।

मगध पर अत्याचार के काले बादल जो छाए हुए हैं। चणक बोलें-क्रूर सैनिकों के आतंक ने मगध के भविष्य पर कालिख जो पोत दी है। शायद वही कालिख हमारे पुत्र को लग गई है।

क्या नंद ने फिर कोई नया अत्याचार किया?

वह एक विलासी राजा है। दिन-रात शराब और शबाब में डूबा रहता है। उसे प्रजा की सुध लेने का होश ही कहा है? किसी भी समय कुछ भी हो सकता है। राजकोष लुट रहा है। देश को चारों और से विदेशी घूर रहे हैं ! आस्तीन के सांप कुचक्र रच रहे है। पता नहीं क्या होगा।

काम-से-काम आज तो इन चिंताओं को त्याग दीजिए। ईश्वर को कोटि-कोटि धन्यवाद दीजिए, जिसने हमें पुत्र-रत्न दिया। वृद्धावस्था का सहारा दिया।

देवी ! चणक मुस्कुराकर बोले -इस समय तो तुम ही मेरे लिए ईश्वर हो। पुत्र-रत्न की प्राप्ति मुझे तुमसे ही हुई है। इसका नाम क्या रखेंगे?

वर्षों बाद हमें कुल-दीपक की प्राप्ति हुई है, अतः हम इसका नाम अपने कुल के अनुसार ही रखेंगे। हमारे कुल का नामकोटिल है। हम इसका नाम कौटिल्य रखते है ! कैसा लगा यह नाम?

आप इतने बड़े विद्वान हैं। साधारण नाम कैसे रख सकते हैं। आपने जो नाम रखा है, वह बहुत अच्छा है।

मैं इसे और दे ही क्या सकता हूँ। एकाएक चणक कुछ उदास होकर बोले-या तो नाम दे सकता हूँ या फिर ज्ञान। किसी राजा के घर पैदा होता, तो इसे जीवन का प्रत्येक सुख मिलता।

आप व्यर्थ ही दुखी हो रहे है। ज्ञान भोग से बड़ा है। विद्वान सदा से पूज्य रहा है। आप अपने पुत्र को इतनी शिक्षा देना की राजा और राज्य स्वयं इसके सामने आत्मसमर्पण करने को तैयार हो जाए।

जरूर! चणकअपने पुत्र को निहारते हुए बोले -इसे प्रतिभाशाली व यशस्वी बनाने के लिए मैं एड़ी-चोटी का जोर लगा दूंगा।

तभी नन्हा कौटिल्य किलकारियां मारने लगा। जैसे यह व्यक्त करना चाहता हो की माता-पिता के निर्णय से उसे प्रसन्नता हुई है।

सुवासिनी

दरिद्रता के वातावरण में कौटिल्य धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। वह अपने पिता से शिक्षा प्राप्त करता तथा मिटटी के खिलौनों से खेलता। मित्र के नाम पर केवल सुवासिनी थी। उम्र में लगभग तीन वर्ष छोटी। महामात्य शकटार की इकलौती संतान।

दोनों में गहरा प्रेम था। सुवासिनी का मन-पसंद खेल था घर-घर खेलना। वह एक छोटा-सा घर बनाकर उसके चारो और लकड़ी की सूखी-सूखी टहनियाँ गाड़कर उनका बाग़ बनाती थी और घर को साफ़-सुथरा करके सुन्दर बनाने का प्रयास करती थी।

देखो तो! फिर वह चाणक्य से कहती-हमारा घर कितना सुन्दर बना है।

चाणक्य घर को देखता, फिर कहता-यह क्या सुवासिनी! तुमने तो मेरी जगह भी घेर ली। मैं पढ़ाई कहाँ करूँगा? यज्ञ कहाँ करूँगा?

यह मेरा घर है। सुवासिनी तुनककर उत्तर देती -कोई अध्ययन-शाला, पूजाघर या यज्ञशाला नहीं है। देखो, यह रसोई है। इसमें मैं भोजन बनाया करुँगी। यह शयनकक्ष है। इसमें हम विश्राम किया करेंगे। यह आँगन है। यहाँ हमारे बच्चे खेल करेंगे।

लेकिन जिस घर में अध्ययन नहीं होता, पूजा-पाठ नहीं होता या यज्ञ नहीं होता, वह नरक के तुल्य होता है. ऐसे घर में मैं न रहूँगा।

तुम क्रोध न करो! तब सुवासिनी हुए कहती-मैं इससे बड़ा घर बनाउंगी. उसमें अध्ययन-कक्ष भी होगा, पूजा कक्ष भी होगा और यज्ञशाला भी होगी। अब तो हंसो न! क्यों मुँह फुलाए बैठे हो? अच्छे पति अपनी पत्नी पर कभी नहीं बिगड़ते।

और कौटिल्य हंस देता, तभी राज-सैनिक वहां आ पहुँचते और कहते-अब चलिए देवी! महामंत्री जी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।

थोड़ी देर खेलने के बाद सुवासिनी कौटिल्य से अलग हो जाती, परन्तु खेल-खेल में उनके हृदय में जो प्रेम के अंकुर फूटे थे, धीरे-धीरे पनपते जा रहे थे।

सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे

आचार्य चणक और महामात्य शकटार प्रायः मिलते तथा राजनीति पर चर्चा करते। एक दिन चणक ने प्रश्न किया-क्या राष्ट्र की परिस्थितियां यूँ ही चलती रहेगी ? जब विदेशी सेनाएं आक्रमण कर देंगी, तब तुम संभालोगे?

मेरी समझ में नहीं आ रहा की क्या करूँ? मैंने महाराज को बहुत समझाया , परन्तु वे मानते ही नहीं।

ओस चाटने से प्यास नहीं बुझती मित्र! यूँ समझाने से राजा कुछ नहीं समझेगा। उंगली टेढ़ी करनी ही होगी। वह भी होशियारी और सतर्कता से।

मैं कुछ समझा नहीं चणक।

नंद के हाथों में मगध सुरक्षित नहीं है। मगध का सम्मान धुल में मिलता जा रहा है। आस-पास के छोटे राजा भी इस पर दृष्टि गड़ाए है।

मैं इस बात को समझता हूँ, परन्तु क्या किया जाए?

महाराज का खात्मा! चणक धीरे से बोले।

शकटार यूँ उछाल पड़े जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो। विस्फारित नेत्रों से वो चणक को देखने लगे।

मगध की सुरक्षा के लिए यह बहुत आवश्यक है। यह काम ऐसे ढंग से होना चाहिए की वास्तविकता कोई जान ही न पाए।

परन्तु महाराज का वध करेगा कौन?

यह कार्य तुम्हें ही करना होगा महामंत्री, किसी और को यह कार्य सौपा गया तो काम अधूरा भी रह सकता है और भेद भी खुल सकता है।

परन्तु मैं यह काम कैसे कर पाउँगा? शकटार बोले-जब तक राक्षस और कात्यायन जैसे मंत्री महाराज के कवच हैं, मैं उनको छू भी नहीं सकता। काम को योजनाबद्ध उपाय से करो। सबसे पहले तुम महारज के सबसे अधिक विश्वासपात्र बनो। जब महाराज तुम पर सबसे अधिक विश्वास करने लगे, तब कात्यायन को किसी प्रकार मंत्री पद से हटवा दो।

फिर? शकटार ने मंत्रमुग्ध स्वर में पूंछा।

फिर कात्यायन को किसी प्रकार यह विश्वास दिलाओ की उस पर तुम्हारी बड़ी कृपा है और तुम उसे पुनः मंत्री बनवाना चाहते हो।

इसका लाभ क्या होगा?

उसे तुम पर दृढ़ विश्वास हो जाएगा। बाद में महाराज से प्रार्थना करके उसे पुनः मंत्री पद दिलवा भी दो। इससे कात्यायन तुम्हारा भक्त बन जाएगा। एक संकेत पर ही वह तुम्हारे लिए प्राण न्यौछावर कर देगा।

लेकिन महाराज का वध करने से कुछ नहीं होगा मित्र। सेनापति सूर्यगुप्त शीघ्र ही सब पता लगा लेगा। तब वह मुझे नहीं छोड़ेगा।

सूर्यगुप्त एक लोभी व्यक्ति है। चणक हंसकर बोले-उसे तुम यदि राज्य का लालच दोगे तो वह तुम्हारे साथ मिल जाएगा?

और राक्षस? शकटार ने पूंछा-जो केवल राष्ट्रभक्त ही नहीं, बल्कि राजभक्त भी है। नंदभक्त भी है। जो महाराज के लिए कुछ भी कर सकता है, उसका क्या होगा?

हर व्यक्ति में कोई-न-कोई कमजोरी अवश्य होती है मित्र। मैं जानता हूँ की राक्षस पर महाराज अटूट विश्वास करते हैं। वह बलशाली भी बहुत है, लेकिन कूटनीति से वह वश में आ जाएगा। जहाँ तक मैं समझता हूँ , मात्र एक सुन्दर स्त्री उसे वश में कर सकती है।

परन्तु ऐसी सुन्दर स्त्री आएगी कहां से, जो राक्षस को भी वश में कर ले और हमारे कहने पर भी चलती रहे।

इसका प्रबंध मैं कर दूंगा। तुम्हारी नज़र में है कोई ऐसी स्त्री।

है। तुम बेला नाइन को जानते हो ?

जानता हूँ। उसकी एक बेटी है। मुरा नाम है उसका।

लेकिन वह राक्षस तक कैसे पहुंचेगी?

इसका उपाय है। चणक शांत स्वर में बोले-तुम किसी प्रकार स्वयं को सख्त बीमार घोषित कर दो। तब राक्षस तुम्हारा पता करने अवश्य आएगा। बस! मुरा उसे वही दिखाई दे जाएगी। सौंदर्य की साक्षात प्रतिमा है मुरा। राक्षस उसे देखते ही मोहित हो जाएगा।

बहुत अच्छा उपाय है। शकटार बोला -आपके जाते ही मैं स्वयं को अस्वस्थ घोषित कर देता हूँ।

चणक यूँ मुस्कुराए जैसे सफलता के मिकत पहुँच गए हो।

राक्षस का शक

बहुत बुद्धिमान था राक्षस। उसे महामात्य का अचानक अस्वस्थ हो जाना कोईसामान्य घटना न लगी। उसका चीख-चीखकर कर कह रहा था कि उस घटना में कोई भेद था। उसने पूरी छानबीन करने का निर्णय लिया।

वह महामात्य के घर के निकट जा पहुंचा। उसने गिद्ध-दृष्टि आस-पास देखा, फिर द्वार पर खड़े प्रहरी से बोला-जब महामंत्रीजी अस्वस्थ हुए, उससे पहले उनसे मिलने कौन आया था?

उस समय मैं पहरे पर नहीं था देव! प्रहरी ने उत्तर दिया।

जो था उसे तत्काल उपस्तिथ करो।

राक्षस की आज्ञा का तुरंत पालन हुआ। राक्षस ने दूसरे प्रहरी से भी वही प्रशन पूछा।

आचार्य चणक आए थे देव! वे बहुत समय तक महामात्य जी से बातें कर रहे थे। फिर लौट गए थे। उत्तर मिला।

चणक! वह दरिद्र ब्राह्मण?

हां देव!

उसके जाने के बाद क्या हुआ?

महामात्यजी अस्वस्थ होने की सूचना मिली।

बेल नाइन की लड़की यहां कब आई?

महामात्यजी के अस्वस्थ होने के थोड़ी ही देर बाद।

क्या वह यहां पहले भी आया करती थी ?

नहीं देव ! वह पहली बार यहाँ आई है। कहती थी, उसे आचार्य चणक ने भेजा है।

राक्षस गहराई से सोचने लगा। कुछ ही समय बाद उसने अगला प्रशन किया-क्या मुरा अब भी यही है?

वह तो आपके जाने के तत्काल बाद यहां से चली गई थी।

उसने अपने आने का कोई प्रयोजन बताया था?

नहीं देव! ठीक है ! राक्षस बोला-मैंने तुम दोनों से जो पूछताछ की है, उसके बारे में किसी को कुछ नहीं बताना। यदि बताया तो मृत्यदंड मिलेगा।

आप निश्चिन्त रहे देव! हम किसी को कुछ नहीं बताएंगे।

जब कौटिल्य का बचपन दम तोड़ने लगा

राक्षस के आदेश से आचार्य चणक व महामात्य शकटार को बंदी बना लिया गया। अंतर केवल इतना था कि चणक अकेले बंदी बनाए गए, जबकि शकटार परिवार सहित।

जिस समय चणक बंदी बनाए गए, उस समय कौटिल्य घर पर न था। जब वह घर लौटा तो अपनी माँ को फूट-फूटकर रोते हुए पाया।

जब कौटिल्य ने माँ से रोने का कारण पूछा, तो उसने केवल इतना ही कहा- तू यहां से भाग जा कौटिल्य। कहीं भी चला जा। राजसैनिक तुझे जीवित नहीं छोड़ेंगे।

परन्तु माँ ! मेरा दोष क्या है? कौटिल्य ने पूछा।

तेरा कोई दोष नहीं है पुत्र ! दोष तेरे भाग्य का है। तेरे पिता को देशद्रोही घोषित कर दिया गया है। एक देशद्रोही के पुत्र को कौन यहाँ शान्ति से जीने देगा।

मैं कहीं नहीं जाऊंगा माँ! मैं यहीं रहूंगा। तुम्हारे पास।

तुझे मेरी कसम है कौटिल्य। अपने पिता की कसम है। चला जा यहाँ से। यहाँ अब जीवन नहीं है। चारो ओर भयंकर मृत्यु छाई हुई है।

मैं शकटार चाचा के पास चला जाऊं?

वो भी बंदी बना लिए गए है पुत्र ! उन्हें भी कारावास में डाल दिया गया है।

और सुवासिनी? कौटिल्य ने धड़कते हृदय से पूछा।

वह भी।

नहीं ! यह सोचने का समय नहीं है पुत्र ! भाग जा यहां से। ईश्वर तुम्हें दीर्घायु दे।

तब घर छोड़कर भागने पर विवश हो गया कौटिल्य, परन्तु जाता कहां? मगध की बाहरी सीमा पर जो वन था, वही चला गया। पूरा दिन वह वन में भटकता।

कंद-मूल, फल खाता तथा नदी का पानी पीता। रात को एक पेड़ पर चढ़कर सो जाता, ताकि वन-प्राणी उसे किसी प्रकार की क्षति न पहुंचा सकें।

अंतिम भेट

राक्षस की उपस्थिति में चणक ने अपने मित्र शकटार से भेंट की। उस समय सुवासिनी भी वहीं थी। चणक को देखते ही उनसे जा लिपटी तथा रोने लगी।

नहीं बेटी ! चणक उसे सांत्वना देते हुए बोले-तुम्हें रोना नहीं चाहिए ! तुम्हें तो प्रसन्न होना चाहिए की तुम्हारे ताउजी ने अत्याचार के सामने शीश नहीं झुकाया।

नहीं ताउजी ! मैं आपको इस प्रकार बलिदान देते हुए नहीं देख सकती।

मेरा बलिदान व्यर्थ नहीं जाएगा बेटी ! समय आने पर चणक के रक्त की एक-एक बून्द से दस-दस चणक पैदा होंगे और फिर क्रान्ति ऐसे ही तो नहीं आ जाती। बलिदान तो देने ही पड़ते है।

परन्तु सुवासिनी का रोना बंद न हुआ। तब चणक शकटार से बोले -अब तुम्ही समझाओ इसे।

मैं इसे क्या समझाऊ ? शकटार बोले-मेरा तो स्वयं का धैर्य समाप्त हो चूका है। मन करता है, फूट-फूटकर रोने लगूं।

इतना कमजोर न बनो शकटार। तुम्हें तो अभी बहुत कुछ करना है।

अब मैं कर ही क्या सकता हूँ?

मनुष्य को कभी निराश नहीं होना चाहिए मित्र। निराशा ही मृत्यु है। अच्छा चलता हुँ। सुना है, तुम्हारी भावज अब जीवित नहीं। कौटिल्य का भी कुछ पता नहीं। तुम्हारे सिवा अब था ही कौन, जिससे जीवन के अंतिम क्षणों में मिलता, इसलिए मिलने चला आया। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

इसके बाद राक्षस के साथ लौट चले चणक। सुवासिनी अभी भी फूट-फूट कर रोए जा रही थी। मैं घर नहीं जाउंगी !!

कौटिलाय को प्यास लगी थी। वह घने वृक्षों के झुरमुट से निकालकर नदी की और जा रहा था।

चारो और भयंकर सन्नाटा छाया हुआ था, जिसे रह-रहकर बिजली की कड़कड़ाहट भंग कर रही थी। वर्षा अभी-अभी रुकी थी। चारो और पृथ्वी पर कीचड़ फैला हुआ था।

एकाएक कौटिल्य के कदम जहाँ-के-तहाँ रुक गए। उसे किसी स्त्री के रोने का स्वर सुनाई दिया।

कौटिल्य आश्चर्य में भर गया। उसने आवाज़ की दिशा का अनुमान लगाया, फिर उधर ही चल पड़ा।

थोड़ी दूर जाने पर उसे स्त्री के रोने का स्वर स्पष्ट सुनाई देने लगा। इसके साथ एक पुरुष का स्वर भी उनके कानो में पड़ा। वह ध्यानपूर्वक उन स्वरों को सुनने लगा।

नहीं··· नही···! स्त्री स्वर रोते हुए अचानक कह उठा..मैं घर नहीं जाउंगी। वहां रहने से तो अच्छा है कि मैं प्राण त्याग दूं।

तू प्राण त्याग देगी तो मेरा क्या होगा ? पुरुष स्वर व्याकुल हो उठा।

तो फिर, तू भी मेरे साथ प्राण त्याग दे। हम उस नीच और अत्याचारी राजा के राज्य में नहीं रहेंगे। वहां ब्रह्म-हत्या हुई है।

आचार्य चणक की मृत्यु नहीं हुई! स्त्री स्वर चीख उठा..उनकी हत्या हुई है। पापी राजा ने अपने हाथों से उसका सिर काटा है। वह सिर अभी भी राज्य के मुख्य चौराहे पर लटका पड़ा होगा। चणक की पत्नी की मृत्यु का उत्तरदायित्व वह पापी राजा ही है।

कौटिल्य इससे अधिक कुछ न सुन सका। उसके सिर पर जैसे आकाश गिर पड़ा। पैरों के नीचे से जैसे पृथ्वी ही खिसक गयी। वह यूं हांफने लगा जैसे सैकड़ो मील की दौड़ लगाकर आया हो। कुछ क्षणों तक वह यूं ही खड़ा रहा, फिर कमान से छूटे तीर की तरह शहर के मुख्य चौराहे की ओर दौड़ लगा दी।

अंतिम संस्कार

आंधी-तूफान की चिंता किए बिना कौटिल्यदौड़ता-दौड़ता एक अज्ञात स्थान पर जा पहुंचा। पास ही गंगा बह रही थी। एक पेड़ के नीचे खड़े होकर कौटिल्य बिलख-बिलखकर रोने लगा। वह अपने पिता का केवल सिर ही प्राप्त कर सका था। पूरी देह नहीं,परन्तु माँ का तो कुछ भी नहीं प्राप्त कर सका था।

पता नहीं, माँ का देहांत कब हुआ था ? उसका अंतिम संस्कार किया जा चूका था या नहीं ? उसकी देह को कहीं राज्यकर्मी ही न ले गए हो।

कितना अभागा वह था। माँ-बाप को कितना गर्व था उस पर। कितनी आशाएं थी उससे, परन्तु सब धूल में मिल गई। वह उनकी कोई सेवा न कर सका। वह सेवा भी न कर सका जिसके किए हर माँ-बाप पुत्र की कामना करते है। अंतिम संस्कार की सेवा, जो पुत्र का एक प्रमुख कर्तव्य भी होता है।

वर्ष अभी भी हो रही थी। वह चाहता था शीघ्रातिशीघ्र अपने पिता के सिर का अंतिम संस्कार कर दे। यदि राज्यकर्मियों ने उसे ढूंढ लिया तो वह इतना भी नहीं कर सकेगा।

अंतिम संस्कार करने में सबसे अधिक कठिनाई थी सुखी लकड़ियाँ प्राप्त करने की। एक ऐसे स्थान की खोज करने की, जहां चिता जलाई जा सके।

पिता का सिर हाथ में उठाएं वह ऐसे ही किसी स्थान को खोजने लगा। ऐसा स्थान उसे बड़ी कठिनाई से मिला। वह स्थान एक पुराना श्मशान घाट था, जिसका प्रयोग तब नहीं होता था। वहां से उसे कुछ सुखी लकडिया तथा थोड़ा सा घास-फूस उपलब्ध हो गया।

उसने एक चिता तैयार की। चिता पर पिता का सर स्थापित किया। पत्थरों को घिसकर बड़े परिश्रम से अग्नि प्रकट की, फिर चिता को मुखाग्नि देते हुए उन श्लोको का उच्चारण किया, जो उसके पिता ने उसे सिखाये थे। छोटी सी चिता धूं-धूं करके जल उठी।

कुछ ही समय बाद वहां रह गया राख का एक ढेर। उसने राख को एकत्रित किया। वहां उपेक्षित सी पड़ी एक मिटटी की हांड़ी में उसे भरा, फिर वहीं एक गड्डा खोदकर उसे दबा दिया।

अंतिम संस्कार

आंधी-तूफान की चिंता किए बिना कौटिल्य दौड़ता-दौड़ता एक अज्ञात स्थान पर जा पहुंचा। पास ही गंगा बह रही थी। एक पेड़ के नीचे खड़े होकर कौटिल्य बिलख-बिलखकर रोने लगा। वह अपने पिता का केवल सिर ही प्राप्त कर सका था। पूरी देह नहीं,परन्तु माँ का तो कुछ भी नहीं प्राप्त कर सका था।

पता नहीं, माँ का देहांत कब हुआ था ? उसका अंतिम संस्कार किया जा चूका था या नहीं ? उसकी देह को कहीं राज्यकर्मी ही न ले गए हो।

कितना अभागा वह था। माँ-बाप को कितना गर्व था उस पर। कितनी आशाएं थी उससे, परन्तु सब धूल में मिल गई। वह उनकी कोई सेवा न कर सका। वह सेवा भी न कर सका जिसके लिए हर माँ-बाप पुत्र की कामना करते है। अंतिम संस्कार की सेवा, जो पुत्र का एक प्रमुख कर्तव्य भी होता है।

वर्षा अभी भी हो रही थी। वह चाहता था शीघ्रातिशीघ्र अपने पिता के सिर का अंतिम संस्कार कर दे। यदि राज्यकर्मियों ने उसे ढूंढ लिया तो वह इतना भी नहीं कर सकेगा। अंतिम संस्कार करने में सबसे अधिक कठिनाई थी सुखी लकड़ियाँ प्राप्त करने की। एक ऐसे स्थान की खोज करने की, जहां चिता जलाई जा सके।

पिता का सिर हाथ में उठाएं वह ऐसे ही किसी स्थान को खोजने लगा। ऐसा स्थान उसे बड़ी कठिनाई से मिला। वह स्थान एक पुराना श्मशान घाट था, जिसका प्रयोग तब नहीं होता था। वहां से उसे कुछ सुखी लकडिया तथा थोड़ा सा घास-फूस उपलब्ध हो गया।

उसने एक चिता तैयार की। चिता पर पिता का सर स्थापित किया। पत्थरों को घिसकर बड़े परिश्रम से अग्नि प्रकट की, फिर चिता को मुखाग्नि देते हुए उन श्लोको का उच्चारण किया, जो उसके पिता ने उसे सिखाये थे। छोटी सी चिता धूं-धूं करके जल उठी। कुछ ही समय बाद वहां रह गया राख का एक ढेर। उसने राख को एकत्रित किया। वहां उपेक्षित सी पड़ी एक मिटटी की हांड़ी में उसे भरा, फिर वहीं एक गड्डा खोदकर उसे दबा दिया।

मैं प्रतिज्ञा करता हूं

सारा कार्य पूरा करने के पश्चात कौटिल्य ने अपने आंसू पौंछ डाले। उसने क्रमशः पृथ्वी और आकाश को देखा, फिर दृढ़ स्वर में बोला ..आकाश देवता और धरती माँ ! मैं आपके सामने प्रतिज्ञा करता हूं, जब तक अत्याचारि नन्द से अपने जन्मदाता की हत्या का प्रतिशोध नहीं ले लेता, तब तक में अग्नि के सम्पर्क में आया कोई भोजन न खाऊंगा, न ही अपने पिता की राख व अस्थियों को गंगा की गोद में प्रवाहित करुंगा।

तुम दोनों मुझे आशीर्वाद दो। प्रकृति की मौन शक्तियों ! मुझे बल दो। हे यमराज ! उस अत्याचारी स्वार्थसिद्धि का नाम अपने लेखे से काट दे। उसकी मृत्यु में हूं।

मैं ! आज से मैं कौटिल्य नहीं, चणक का पुत्र चाणक्य हूं। कौटिल्य मर चुका ! अपने मात-पिता की मृत्यु के साथ ही कौटिल्य मर चूका !लेकिन…! उसकी आत्मा ने उसे झिंझोड़ाक्या तू यह प्रतिज्ञा पूरी कर पायेगा ? राज्य कर्मचारी तुझे

शिकारी कुत्तों की तरह खोज रहे होंगे। यदि उन्होंने तुझे ढूंढ लिया तो तेरा सिर भी काटकर चौराहे पर टांग दिया जायेगा।

तो तुझे क्या करना चाहिए ? चाणक्य बड़बड़ाया।

सबसे पहले तुझे स्वयं को बदलना होगा। अपना चेहरा बदलना होगा। अपना शेष शरीर भी बदलना होगा। तेरी सुरक्षा के लिए यह नितांत आवश्यक है। तू स्वयं को बदल डाल। फिर युद्ध की शिक्षा ले।फिर राजनीति की शिक्षा ले। कूटनीति का ज्ञान प्राप्त कर, तभी तेरी प्रतिज्ञा पूरी होगी।

हां! चाणक्य मन-ही-मन बोला..मैं यही करूंगा। मैं स्वयं को ऐसा बदल डालूंगा कि कोई मुझे पहचान ही नहीं पायेगा।

तब चाणक्य ने स्वयं को बदलने के लिए कोई उपाय सोचना शुरू कर दिया।

आचार्य राधामोहन की शरण में

प्रातः की वेला हो गई। आकाश में सिंदूरी आभा दिखाई देने लगी। लोग नित्यकर्म से निवृत होकर गंगा तट पर जाकर स्नान करने लगे। उन्हीं लोगो में एक थे आचार्य राधामोहन स्वामी।

स्नान करने के बाद स्वामीजी ने गंगाजल की अंजलि अर्पित की। सूर्य को अर्घ्य दिया तथा उसकी उपासना की। इसके बाद वे नित्य की भातिं की ओर चल दिए। प्रभु नाम का उच्चारण करते हुए वे अपनी ही धुन में चले जा रहे थे कि एकाएक उनका पैर कहि टकराया। उन्होंने सिर झुका कर देखा तो आश्चर्य में डूब गए। उनके सामने एक जले हुए शरीर वाला बालक बेसुध पड़ा था।

अरे ! यह बालक कौन है ? वे चौंककर बोले..लगता है, यह किसी दुर्घटना का शिकार हो गया है। इसके बाद बालक के निकट जा बैठे तथा उसे होश में लाने का प्रयत्न करने लगे। बहुत देर बाद चाणक्य को होश आया। अपने सम्मुख एक ब्राह्मण को देखकर वह चौंककर उठ बैठा तथा इधर-उधर देखने लगा।
चिंता न करो बालक ! स्वामीजी बोले..अपना परिचय दो और यह भी बताओ कि तुम्हारी यह दशा कैसे हो गई ?

आप कौन है ? चाणक्य ने पूछा।

मैं राधामोहन स्वामी हूं। गांव के विद्यालय में शिक्षक हूं। अकेला रहता हूं। जहां इस समय तुम बैठे हो, यह मेरा छोटा सा खेत है। यहां मैं अपना पेट भरने के लिए थोड़ा अन्न उगा लेता हूं। गांव के बालको को शिक्षा देता हूं तथा ईश्वर भक्ति में लीन रहने का प्रयास करता हूं। अब तुम अपना परिचय दो।

मैं एक अनाथ बालक हूं आचार्य जी ! चाणक्य बोला..संसार में मेरा कोई नहीं है। कोई निश्चित निवास भी नहीं है। कभी यहां, तो कभी वहां भटकता फिर रहा हूं।

तुम्हारा शरीर कैसे जल गया ?

भोजन बना रहा था। अचानक कपड़ों ने आग पकड़ ली। उसी से मेरा यह हाल हो गया। सोचा था, गंगा में कूदकर अपने प्राण दे दूं, परन्तु यह मुझसे नहीं हो सका।

आत्महत्या पाप है पुत्र। स्वामीजी शांत स्वभाव से बोले..वैसे भी यह कायर व्यक्तियों का काम है। तुम तो मुझे बहादुर बालक लगते हो।

ऐसे अनाथ जीवन का लाभ ही क्या आचार्य जी ?

जो अनाथ होता है, उसका नाथ ईश्वर होता है। तुम स्वयं को अनाथ मत समझो। ईश्वर को अपना बनाओ। वह बहुत दयालु है। बड़ा कृपालु है।

मुझे इस समय आप में ही ईश्वर के दर्शन हो रहे है। आपने इतने अपनत्व से बात की। मेरे मन का सारा क्लेश दूर हो गया।
तो फिर उठो। मेरे साथ चलो।
कहां आचार्य जी ?

पाठशाला ही मेरा निवास स्थान है। वहां चलकर विश्राम करो। स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करो। जब पूरी तरह स्वस्थ हो जाओ तो जहां इच्छा हो, वहां चले जाना।

आप पूज़नीय है। आदरणीय है। मैं आपकी आज्ञा अवश्य मानूंगा। कहकर चाणक्य उठ खड़ा हुआ।

तुमने अपना नाम तो अभी तक बताया ही नहीं। क्या नाम है तुम्हारा ? स्वामीजी ने शांत स्वर में पूछा।

विष्णुगुप्त। स्वामीजी चाणक्य को लेकर पाठशाला की ओर चल पड़े।

तक्षशिला में नए जीवन का श्री गणेश

राधामोहन स्वामी ने चाणक्य को आचार्य पुण्डरीकाक्ष के नाम एक पत्र लिखकर दिया, फिर पाठशाला के छात्रों तथा गुरु से अश्रुपूर्ण विदाई लेकर चाणक्य ने तक्षशिला की ओर प्रस्थान किया। इस प्रकार श्रीगणेश हुआ एक नई यात्रा का। अब वह बालक कौटिल्य नहीं था। विष्णुगुप्त चाणक्य नाम का एक पूर्ण स्वस्थ युवक बन चुका था। अब उसके शरीर में तेज गति थी। ह्रदय में धधकती हुई प्रतिशोध की आग थी।

भावनाओं को अपने में समाहित कर जाने का अदम्य उत्साह था। उसने तक्षशिला की ओर जो यात्रा प्रारम्भ की थी,वह लगातार चलती रही। उसने कई नगर, गाँव तथा प्रदेश पीछे छोड़ दिए। उसके कदमो में तनिक भी शिथिलता नहीं आयी। पूरा एक दिन चलने के बाद चाणक्य ने एक सार्वजनिक अतिथिशाला में विश्राम किया। विश्राम करते समय उसके मन में विचार आया ..मुर्ख !यह तू क्या कर रहा है ? यूं विश्राम करने लगा तो लक्ष्य दूर हो जायेगा। तू एक अविराम पथिक बन। तेरा काम रुकना नहीं, लगातार आगे बढ़ना है। अपने लक्ष्य को शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त करना है।

यह विचार मन में आते ही चाणक्य उठ खड़ा हुआ। उसने अपना सामान कंधे पर लादा और रात्रि के घोर अंधकार में वहां से चल पड़ा।

गांधार में प्रवेश

चलते-चलते चाणक्य ने गांधार प्रान्त में प्रवेश पा ही लिया। वहां पहुंचते ही उसका चेहरा खिल उठा। बहुत चर्चा सुनी थी उसने गांधार की। वहां की सभ्यता तथा भव्यता की। पुरातनता तथा विशाल भवनों की। सचमुच वहां के नागरिक तथा भवन अलग ही प्रतीत हो रहे थे।

वहां सचमुच सभ्यता व भव्यता दिखाई दे रही थी। उसने गांधार के बारे में जैसा सुना था, वैसा ही पाया।

थके हारे विष्णुदत्त ने एक धर्मशाला में प्रवेश किया। वहां उसने पहले स्नान करके अपने तन की थकान मिटाई, फिर पूजा-पाठ करके आत्मा की भूख मिटाई, फिर अंत में भोजन करके जठराग्नि को शांत किया।

रात्रि को विश्राम करके वह प्रभात बेला में उठ बैठा। उसने तक्षशिला का पता पूछा, अपना सामान कंधे पर लादा तथा वहां से अपने गंतव्य स्थान की ओर चल पड़ा।

उस समय उसके हर्ष का कोई पारावार न था। वह उस स्थान के निकट पहुंच चुका था जहां देश-विदेश से बड़े-बड़े विद्वान शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते थे।

जहां राजनीति,अर्थशास्त्र, दर्शनशास्त्र, इतिहास व ज्ञान-विज्ञानं की पूर्ण शिक्षा दी जाती थी।

नंद वंश का विस्तार यूं हुआ

कुछ समय पश्चात महारानी सुनंदा ने किसी संतान के स्थान पर एक मांस पिंड को जन्म दिया।

महाराज के आदेश पर राक्षस को बुलाया गया तथा वह मांस पिंड दिखाया गया। राक्षस ने ध्यानपूर्वक मांस पिंड को देखा, फिर अपनी तलवार से नौ टुकड़े कर दिए। प्रत्येक टुकड़े को उसने अलग-अलग जल से भरे जारों में रखवा दिया।

कुछ ही समय पश्चात उन मांस पिंडो ने आकार धारण कर लिया। तब राक्षस ने उन्हें दूसरे उचित स्थान पर रखवा दिया। समय पाकर वे नौ बालक बन गए।

बधाई हो महाराज ! एक दिन राक्षस महाराज से बोला..अब आप स्वस्थ नौ पुत्रों के पिता बन चुके है।

सबसे अधिक बधाई तुम्हे हो राक्षस ! महाराज प्रसन्नतापूर्वक बोले..यदि तुम अपनी विद्या द्वारा उस मांस पिंड का उचित उपचार न करते तो हम इन नौ पुत्रों के पिता नहीं बन सकते थे। हमे तुम पर गर्व है राक्षस। तुम मेरे लिए इस संसार की सबसे अमूल्य निधि हो। अब सुनो, मैं तुम्हे एक शुभ समाचार और सुनाता हूं।

सुनाइए महाराज।

रानी मुरा भी इस समय गर्भवती है।

मुरा का नाम सुनकर राक्षस के मन में कड़वाहट-सी भर गई, फिर भी वह मुस्कुराते हुए बोला..बधाई हो महाराज ! आपके वंश का यूं तेजी से विस्तार होता देख मैं बहुत खुश हूं।

हम जानते है। महाराज बोले..तुम्हे हम से भी अधिक प्रसन्नता हुई होगी। अब हम तुमसे एक प्रार्थना करना चाहेंगे।

प्रार्थना नहीं महाराज, आज्ञा दीजिये। मैं आपकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करूंगा।

किसका जीवन कितना लम्बा है, राक्षस, यह कोई नहीं जानता। महाराज गंभीर होकर बोले..मृत्यु कभी भी किसी को अपना शिकार बना सकती है। हम चाहते है, यदि हमे मृत्यु अपना ग्रास बना ले तो तुम हमारे वंश की रक्षा करो।

यह आप क्या कह रहे है महाराज ! ईश्वर मेरी आयु भी आपको दे दे।

हम तुम्हारी भावनाओं का सम्मान करते है, परन्तु सच्चाई तो सच्चाई ही होती है राक्षस। यदि तुम हमे यह वचन दे सको तो हम निश्चिंत हो सकेंगे।

राक्षस का तो जन्म ही नंद वंश की सेवा के लिए हुआ है।
फिर भी यदि मेरे वचन देने से आप निश्चिंत होते है तो मैं आपको वचन देता हूं। जब तक मेरे शरीर में एक भी सांस शेष रहेगी, नंद वंश की रक्षा व सेवा करता रहूंगा।शाबाश राक्षस ! महाराज निश्चिंत भाव से बोले..अब हमे कोई चिंता नहीं।

मुरा ने पुत्र को जन्म दिया

उचित समय पर रानी मुरा ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। तब पुरे मगध को दुल्हन की तरह सजाया गया तथा खुशियां मनाई गई।

महल में तरह-तरह के आयोजन किये गए। महाराज की प्रसन्नता के लिए राक्षस ने हर प्रकार के प्रबंध किए।

इसके बाद सुनंदा के मांस पिंड से उत्पन्न नौ पुत्रों को नंद कहा जाने लगा तथा मुरा द्वारा उत्पन्न पुत्र को मौर्य।

चाणक्य ने अपना वचन पूरा किया

समय तेजी से बीतता रहा। कई बसंत आए। कई पतझड़ गए। चाणक्य पूरी निष्ठां व लग्न से अपने अध्याय में जुटे रहे।

कुछ समय में ही उन्होंने अपने आचार्यो व सहपाठियों की दृष्टी में अपना एक विशेष स्थान बना लिया।

यद्यपि आचार्य पुण्डरीकाक्ष चाणक्य से कोई सेवा नहीं चाहते थे, परन्तु चाणक्य उनकी फिर भी मन लगाकर सेवा किया करते थे।

उन्होंने उपनिषद, व्याकरण, गणित, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष व रसायन-शास्त्र इत्यादि में पूर्ण पाण्डित्य प्राप्त कर लिया। वे बड़े-बड़े विद्वानो के साथ शास्त्रार्थ करने लगे और शास्त्रार्थ में उन्हें पराजित करने लगे।

पाटलिपुत्र में चाणक्य के कदम

जिस समय चाणक्य ने मगध की भूमि पर अपना कदम रखा, उस समय सूर्योदय होने को था। पूरी पृथ्वी प्रकाश से भर चुकी थी। पहले तो मन किया कि जाकर अपने बचपन की मित्र सुवासिनी को तलाश करे। अपने चाचा शकटार के दर्शन करे, परन्तु उन्हें उचित न लगा।

उन्होंने अपने मन में विचार कियासबसे पहले मुझे राजा नन्द का नाश करना है। उससे अपने माता-पिता की मृत्यु का प्रतिशोध लेना है। अपने पिता की अस्थियो व राख को गंगा में प्रवाहित करना है। अपना संकल्प पूरा करके ही मैं किसी से मिलूंगा।

ऐसा विचार करके चाणक्य ने राजधानी पाटलिपुत्र के बाहर अपनी एक झोपडी बना ली तथा वहां रहकर खोजबीन शुरू कर दी।

आस-पास के खेतों के किसान प्रायः उनसे मिलने आ जाया करते थे। बातों-बातों में चाणक्य उनसे सब कुछ जान गए।

वे जान गए कि महाराज ने सन्यास लेकर जंगल में रहना शुरू कर दिया है। राज्य की सत्ता नंद भाइयों ने संभाल रखी है। वे जान गए की महाराज नंद ने जंगल में अपना निवास स्थान कहां बना रखा है?
सारा पता लगाने के बाद उन्होंने अपने वस्त्रों में एक कटार छिपाई तथा अपना संकल्प पूरा करने हेतु जंगल की ओर चल पड़े।

लम्बे समय बाद हुई अपनों से भेंट

अपना संकल्प पूरा कर लेने के बाद चाणक्य अपनी झोपड़ी में लौट गए। उनके मन में पूर्ण शांति भर गई थी। उस दिन उन्होंने वर्षों बाद जी भरकर विश्राम किया। अब वे अपने बचपन की मित्र सुवासिनी और चाचा-चाची से मिलना चाहते थे। उन्हें क्या पता था की उनके माता-पिता की तरह उनकी चाची भी अब संसार में नहीं रही। किसानों से वे इतना जान चुके थे कि शकटार को न केवल बंदीगृह से रिहा कर दिया गया है, बल्कि उन्हें एक मंत्री पद भी दे दिया गया है, परन्तु सुवासिनी या उसकी माँ के बारे में कुछ नही जान पाए थे। न ही उन्होंने बारे में किसानो से कुरेद-कुरेदकर पूछना उचित समझा था।

वे महाराज की हत्या करके उनका सिर चौराहे पर टांग आए थे। अतः जब तक वहां का वातावरण शांत जाए, वहां पुनः जाना उचित नहीं समझते थे, परन्तु सुवासिनी से मिलने व उसे देखने के लिए वे बहुत व्याकुल थे, काफी प्रयत्न करने पर, फिर एक दिन सुवासिनी व शकटार से उनकी भेंट हो ही गई।

चाणक्य तक्षशिला लौट आए

अपने प्रियजनों से भेंट करके आचार्य चाणक्य तक्षशिला पहुंच गए। विश्वविद्यालय के सभी कर्मचारी, ऋषि-महात्मा, आचार्यगण, कुलपति तथा कई राज्यों के राजकुमार उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। नया सत्र प्रारम्भ होने में केवल एक ही दिन शेष था और चाणक्य यह वचन देकर गए थे कि वह सत्र शुरू होने से पहले ही लौट आएंगे, इसलिए सभी को उनकी

व्याकुलता से प्रतीक्षा थी।तक्षशिला में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जिसे यह अनुमान हो कि आचार्य विष्णुगुप्त का जन्म-स्थान कौन-सा है ? वे अवकाश लेकर कहां गए है तथा क्या कार्य सिद्ध करके लौटेंगे।

चाणक्य प्रायः कम बोलते थे, परन्तु इस बार वे लौटे तो लगभग मौनव्रती होकर ही लौटे। कोई कैसे जान सकता था कि उनके मन में कैसी हलचल हो रही है। कुछ कर दिखाने की कैसी उत्कृष्ट इच्छा जन्म ले चुकी है।

अगले ही दिन से उन्होंने अपना कार्यभार संभाल लिया तथा छात्रों को पूरी तन्मयता से शिक्षा देने लगे।

सिकंदर का आक्रमण

लगभग पंद्रह वर्ष तक चाणक्य दिन-रात अपने कार्य में लगे रहे। इस बीच सिकंदर लगातार भारतवर्ष में आगे बढ़ता रहा। कुछ राज्यों में आक्रमण करके उसने अपना अधिकार भी कर लिया। चाणक्य अब वृद्धावस्था में प्रवेश कर चुके थे। चाहा तो उन्होंने भी था कि उनका एक घर परिवार हो, परन्तु व्यक्तिगत हितो के लिए उन्होंने कभी अपनी भावनाओ का त्याग नहीं किया। वे लगातार राजकुमारों को देश-प्रेम की शिक्षा देते रहे तथा उन्हें विदेशी शक्तियों के विरुद्ध संगठित हो जाने का संदेश देते रहे।

इन पंद्रह वर्षों में चाणक्य पूरे भारतवर्ष में प्रसिद्ध हो गए। प्रत्येक राज्य में उनका नाम सम्मानपूर्वक लिया जाने लगा। उनसे पढ़े हुए कई राजकुमार तो राजा भी बन गए।
एक दिन चाणक्य ने मगध जाने का विचार किया। वे अपने चाचा शकटार व अपनी मित्र सुवासिनी से मिलना चाहते थे। अपनी जन्मभूमि की राजनैतिक स्थिति जानना चाहते थे।

बालक चन्द्रगुप्त से भेंट

एक दिन चाणक्य महल के पिछले भाग के निकट टहल रहे थे। राज्य की बदलती हुई स्थिति व खतरे की आशंका को वे अच्छी तरह से जान चुके थे। सुवासिनी का चेहरा अभी तक उन्हें दिखाई नहीं दिया था। एकाएक मार्ग की कंटीली घास उनके पैरों में चुभ गई तथा वहां से खून निकलने लगा। उन्हें क्रोध आ गया। उन्होंने उस मार्ग की सारी कंटीली घास को उखाड़ फेकने का निर्णय ले लिया। वे तन्मयता से अपने इस कार्य में जुट गए।

जब तक उन्होंने पूरी घास को उखड न लिया, अपने हाथो को नहीं रोका। अपना कार्य समाप्त करके वे एक वृक्ष के नीचे जा बैठे तथा विश्राम करने लगे।

प्रणाम ब्राह्मण देवता। तभी एक कोमल स्वर सुनाई दिया। उन्होंने देखा तो चकित रह गए। उनके सामने वही बालक खड़ा था, जिसने मदारी की चुनौती को स्वीकार किया था।

तुम ? चाणक्य चौंककर बोले...तुम तो वही हो न जिसने उस मदारी की चुनौती को स्वीकार किया था ?

हां ब्राह्मण देवता। बालक ने उत्तर दिया...मैं वही हूं।

क्या तुम मौर्य हो ? चाणक्य ने हिचकिचाते हुए पूछा।

हां ! इस समय मैं ही एकमात्र जीवित मौर्य हूं। मेरे पिता व भाइयों की हत्या हो गई। केवल मैं बच गया।

तुम्हे जीवित क्यों छोड़ दिया गया ?

क्या आप हमारे बारे में सब कुछ जानते है ?

मैं केवल इतना ही जानता हूं की तुम्हारे पिता व भाइयों ने जंगल में बने महल में भूख-प्यास से तड़प-तड़पकर दम तोड़ दिया।

जी हां, परन्तु मैं फिर भी जीवित रहा। कुछ दिनों बाद जब लाशों की दुर्गन्ध फैलने लगी तो महल का द्वार खुलवाया गया। मुझे बाहर निकालकर महल को लाशों सहित आग लगा दी गई। महाराज व उसके भाई यह नहीं चाहते थे की मौर्यों की मौत की वास्तविकता कोई जान पाए। मुझे लाकर बंदीगृह में डाल दिया गया।

परन्तु तुम अपनी बुद्धिमानी से स्वतंत्र हो गए। क्या तुम्हे महल में कोई काम भी दे दिया गया है ?

जी हां ब्राहमण देवता। मुझे अतिथिशाला का कार्य-भार सौंप दिया गया है। मैं अतिथियों को को भोजन खिलाता हूं तथा उनकी सेवा करता हूं।

परन्तु यह कार्य कुलीनों का नहीं है।
सेवा-कार्य मिल जाना मेरा सौभाग्य है। बालक बोला...मैं अतिथियों की सेवा करके आनंद का अनुभव करता हूं।

चाणक्य की खोजपूर्ण दृष्टी बालक के चेहरे पर गड़-सी गई, परन्तु बालक उससे जरा भी विचलित न हुआ। उसने सम्मानपूर्वक कहा...मैं आपसे यह प्रार्थना करने आया हूं कि चलकर अतिथिशाला में भोजन कर ले।

भोजन ? चाणक्य चौंककर बोले...तुम्हे कैसे पता की मुझे इस समय भोजन की आवश्यकता है ?

मैं सुबह से आपको देख रहा हूं।बालक ने कहा...आपने बिना रुके दोपहर तक लगातार कार्य किया है !आपने इस मार्ग की सारी कंटीली घास को उखाड़ फेका है। क्या आपको भूख नहीं लगी होगी। कृपया मेरे साथ चले और भोजन करके मुझे कृतार्थ करे।

चाणक्य ने बालक को निकट बुलाया, फिर उसके सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखकर पूछा...तेरा नाम क्या है?

मेरा नाम चंद्रगुप्त है ब्राहमण देवता। बालक ने उत्तर दिया...मैं अपने माता-पिता का सबसे छोटा पुत्र हूं।

परन्तु तेरा भाग्य बहुत ऊंचा है पुत्र। चाणक्य ने कहा...ईश्वर ने चाहा तो तू राजा बनेगा।
यदि आप जैसा कोई गुरु मिल गया तो अवश्य बन जाऊंगा।

मेरे जैसा गुरु।आप धुन के पक्के है ब्राहमण देवता। आप जो करने की ठान लेते है, उसे करके ही दम लेते है। यदि मैं राजा बनूंगा तो ऐसे ही गुरु की कृपा से बन पाऊंगा। अब आइये, आपको तेज भूख लगी होगी। चाणक्य प्रसन्नतापूर्वक उठ खड़े हुए तथा चंद्रगुप्त के साथ चल पड़े।

घोर अपमान

चंद्रगुप्त ने अथितिशाला में चाणक्य को ऊंचे आसन पर बैठाया तथा स्वयं उनके लिए भोजन परोसा। इसके पश्चात वह आग्रह कर-करके चाणक्य को खिलाने लगा। चाणक्य प्रेमपूर्वक भोजन करने लगे, परन्तु अभी वह आधा भोजन भी नहीं कर पाए थे कि नंदराज अपने भाइयों सहित वहां आ पहुंचा। एक काले-कलूटे वअधनंगे ब्राह्मण को ऊंचे आसन पर भोजन करते देख, वह क्रोध से भर गया।

क्यों रे नंगे !वह चीखकर बोला...तेरी इतनी हिम्मत कैसे हो गई जो ऊँचे आसन पर बैठकर भोजन करे। चल उठ,भिखारी कहीं का।चाणक्य ने नंदराज के शब्दों को अनसुना कर दिया। इससे नंदराज व उसके भाइयों का क्रोध भड़क उठा। वे सभी चाणक्य पर टूट पड़े। उन्होंने चाणक्य के सामने रखा भोजन दूर फेंक दिया तथा उन्हें मारने पीटने लगे। अंत में उन्होंने चाणक्य को अपमानित करके अतिथिशाला से बाहर धकेल दिया।

संकल्प

इस सारे घटनाक्रम में चाणक्य की चोटी की गांठ खुल गई। तब चाणक्य क्रोध में आकर बोले...अरे दुष्टो ! तुमने एक ब्राह्मण का अपमान करके अच्छा नहीं किया। जब तक मैं तुम्हारा सर्वनाश न कर लूंगा, तब तक अपनी चोटी में गांठ नहीं लगाऊंगा।इसके बाद चाणक्य एक क्षण भी वहां न रुके। वे तेजी से चलते हुए महल से दूर होते चले गए। तभी चंद्रगुप्त दौड़कर उनके निकट पहुंचा। उसकी आंखो से झर-झर आंसू बह रहे थे। वह उनके चरणो में गिरकर बोला...मुझे क्षमा करदे ब्राह्मण देवता ! मैं आपको अपमानित होने से नहीं बचा पाया। यदि मैं सक्षम होता और मेरे हाथ में तलवार होती तो मैं उन दुष्टो के टुकड़े-टुकड़े कर डालता।

चाणक्य ने चंद्रगुप्त को उठाया तथा अपनी छाती से लगाकर बोले...जो कुछ हुआ, उसमे तेरा कोई दोष नहीं है, तू क्यों दुखी होता है ?तू क्यों रोता है ?

यह सब मेरे ही कारण हुआ है। चंद्रगुप्त रोते हुए बोला...मैं ही आपको अतिथिशाला में लेकर गया था।

तू कोई मेरा अपमान कराने के लिए वहां थोड़े ही लेकर गया था ?चाणक्य उसके आंसू पौंछते हुए बोले...तू तो सम्मानपूर्वक मुझे भोजन कराने ले गया था। मेरा अपमान हुआ, इसमें तेरा दोष तो नहीं है।

परन्तु चंद्रगुप्त फिर भी चुप न हुआ। वह लगातार रोता ही रहा।

तू चुप हो जा।चाणक्य बोले...तेरा जन्म इस प्रकार रोने के लिए नहीं हुआ। इस तरह रोएगा तो राजा कैसे बनेगा ?

तब चंद्रगुप्त रोना भूलकर चाणक्य की ओर देखने लगा।

अच्छा बता। चाणक्य बोले...तूने कभी विष्णुगुप्त चाणक्य का नाम सुना है ?

उन्हें कौन नहीं जानता। चंद्रगुप्त ने उत्तर दिया...तक्षशिला में वे बहुत बड़े आचार्य है। वहां स्थान-स्थान से राजपुत्र आकर उनसे शिक्षा ग्रहण करते है।